धर्मायण

मूल्य : 45 रुपये

अंक 135

आश्विन, 2080 वि. सं.

(धार्मिक, सांस्कृतिक एवं राष्ट्रीय चेतना की पत्रिका)

पितृ-भक्ति विशेषांक

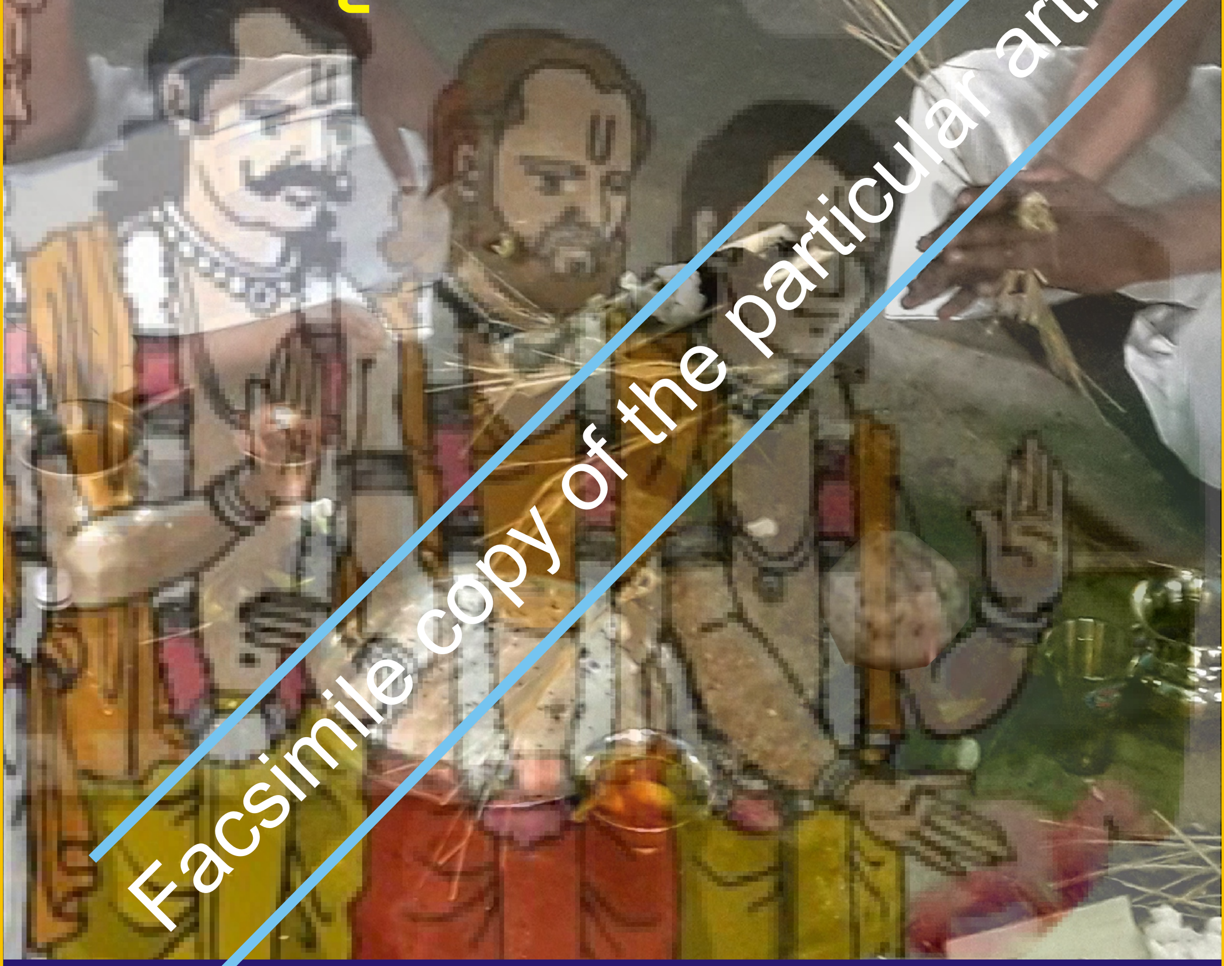

Facsimile copy of the particular article

पितरों का श्राद्ध और तर्पण क्यों है आवश्यक?

पितर की वैदिक अवधारणा एवं उसका विकास

श्री राधा किशोर झा
भारतीय प्रशासनिक सेवा (अवकाश-प्राप्त)
सामान्य प्रशासन विभाग, बिहार (पटना) क्वांटम डीएनआर. एपार्टमेंट, फ्लैट सं. 305, 70 फीट बाइपास, विष्णुपुर, पकरी 35 फीट, बिहार डिजिटल वर्ल्ड के पास, द्वारकापुरी, पटना–800002

इस आलेख में लेखक ने सिद्ध किया है कि वर्तमान में प्रचलित श्राद्ध-पद्धति के मूल में वैदिक पितृयज्ञ है, जो मरणोपरान्त किया जाता था। वेद में यह हवन प्रधान था, ब्राह्मण भाग में पिण्डदान भी जुड़ गया तथा धर्मसूत्र में ब्राह्मण भोजन को विकल्प के रूप में प्रमुख माना गया। गृह्यसूत्रों में हवन, पिण्डदान एवं ब्राह्मण-भोजन इन तीनों का समन्वय कर दिया गया। फलस्वरूप अग्नौकरण, पिण्डदान और ब्राह्मण भोजन ये श्राद्ध के तीन अंग हो गये।" वस्तुतः परवर्ती काल में जब आगम परम्परा प्रधान हुई तो हवन के स्थान पर भी ब्राह्मण भोजन आ गया तथा पद्धतियों में दान को भी सम्मिलित कर लिया गया। लेकिन सैद्धान्तिक रूप से ऋग्वेद में संकेतित पितर, पितृलोक, यमलोक तथा पूर्वजों के प्रति श्रद्धा का भाव वर्तमान तक जीवित है। ब्राह्मण-ग्रन्थों में वर्णित पितृपिण्डयज्ञ वर्तमान में एकोद्दिष्ट के रूप में है, इसीकी 16 आवृत्ति कर षोडश-श्राद्ध का ताना-बाना बुना गया है।

वेद का यह अनुशासन है कि हम देव एवं पितृकार्य में प्रमाद न करें। **देवपितृकार्याभ्यां न प्रमदितव्यम्।**[1] अर्थात् यावज्जीवन देवयज्ञ एवं पितृयज्ञ करना चाहिए

यज्ञ अध्याय में नित्य पितृयज्ञ (तर्पण) का वर्णन किया गया है। यहाँ पर हम मरणोपरान्त पितर के लिए किए जानेवाले पितृयज्ञ का वर्णन करेंगे।

ऋग्वेद के दशम मंडल के 15 वें सूक्त में पितृसूक्त का वर्णन है जिसमें चौदह ऋचाएें है। इस सूक्त के आठ ऋचाओं या 14 ऋचाओं से हवन करने का विधान अष्टका श्राद्ध में किया गया है—

उदीरतामवर उत्परास (ऋ. वे. 10.15.1) इत्यष्टाभिर्हुत्वा यावतीभिर्वा कामयीत।[2]

इस सूत्र की व्याख्या में व्याख्याकार नारायण लिखते हैं—

अग्नौ करणमन्त्रयोः स्थाने 'उदीतरतामवर उत्परास' इत्यष्टाभिश्चतुर्दशर्भिर्वा हुत्वा मेक्षण-मनुप्रहृत्य ब्राह्मणेभ्योऽन्नदानादिशेषनिवेदनान्तं पार्वण-वत्कृत्वा, भुक्तवत्सु पिण्डपितृयज्ञवन्नियनादि-पात्रोत्सर्गान्तं कृत्वा, ततः श्राद्धशेषं समापयेदिति।

अर्थात् अग्नि में आहुति देते समय 'उदीरतामवर उत्परास' इन आठ ऋचाओं से अथवा चौदह ऋचाओं से आहुति देना चाहिए। इसके बाद ब्राह्मणों को

1. तैत्तिरीय उपनिषद् : 1.11.1
2. आश्वालायन गृह्यसूत्र : 2.4.6.

अन्नदान आदि देकर निवेदन कर पार्वण के समान क्रिया कर ब्राह्मणों के भोजनापरान्त पिण्डपितृयज्ञ के समान नियम आदि पात्रों का उत्सर्ग कर शेष श्राद्ध समाप्त करें।

तैत्तिरीय संहिता में पितृयज्ञ के हविष् के होम मन्त्र का वर्णन है, जिनकी संख्या 14 है। इसमें उल्लेख है—

उशन्तस्त्वा हवामह उशन्तः समिधीमहि।
उशन्नुशत आ व पितॄन् हविषे अत्तवे।[3]

हे अग्ने! कामना वश हम तुम्हें आवाहन करते हैं और कामनावश तुम्हें वेदी पर प्रदीप्त करते हैं। हे अग्ने! कामना करते हुए तुम हविष् की कामना करनेवाले पितरों को हविः भक्षण करने के लिए यहाँ ले आओ।

यह मन्त्र थोड़ा अन्तर से माध्यन्दिन शुक्ल यजुर्वेद, 19.70 में है—

उशन्तस्त्वा निधीमह्युशन्तः समिधी महि।
उशन्नुशत आ वह पितॄन्हविषे अत्तवे।[4]

ऋग्वेद के पितृसूक्त (10.15) में सोमवन्त पितर, बर्हिषद् पितर और अग्निष्वात्त पितर को आवाहन किया गया है और उन्हे हवि प्रदान किया गया तथा स्तुति की गई है।

इसी सूक्त के अधोलिखित मन्त्र में कहा गया है— जो पितर यहाँ यज्ञ में उपस्थित है, जो उपस्थित नहीं है, जिन्हे हम जानते है, और जिन्हें हम ठीक से नहीं जानते — हे जात वेदस अग्ने। वे जितने हैं, उन्हें तुम अच्छी तरह जानते हो। उन्हें तुम इस यज्ञ से संतुष्ट करो।

ये चेह पितरो ये च नेह
याश्च विद्म याँ उ च न प्रविद्म।
त्वं वेत्थ यति ते जातवेदः
स्वधाभिर्यज्ञं सुकृतं जुषस्व॥[5]

इस वर्णन से स्पष्ट होता है कि वैदिक काल में ऋषियों द्वारा अपने पितरों की यज्ञ में आहूत किया जाता था, उनकी स्तुति की जाती थी, उनसे आशीर्वचनो की याचना की जाती थी, साथ ही उन पितरों के उन्नयन के लिए प्रार्थना की जाती थी। अर्थात् ऋषियों को अपने पितरों के प्रति काफी श्रद्धा थी। शुक्ल यजुर्वेद माध्यन्दिन शाखा के 19वें अध्याय से स्पष्ट होता है कि सौत्रमणि यज्ञ में पितर का आवाहन, हवन एवं स्तुति होती थी। कात्यायन श्रौत्रसूत्र[6] से ज्ञात होता है कि पिण्डपितृयज्ञ दर्शपौर्ण मास यज्ञ का एक अंग था।

वेद के ब्राह्मण भाग में पिण्डपितृयज्ञ और पितृयज्ञ का वर्णन मिलता है, इसमें पिता, पितामह और प्रपितामह के लिए पिण्डदान किया जाता था। साथ ही, पिण्डपितृयज्ञ में अग्नि एवं सोमदेवता के लिए हवन किया जाता था तदनन्तर सभी ऋतुओं को पितर के रूप में नमस्कार किया जाता था।[7] शतपथ ब्राह्मण 2.6.1 में पितृयज्ञ का वर्णन है, जिसमें सोमवन्त, बर्हिषद् एवं अग्निष्वात्ता पितर के लिए अग्नि में हवन का विधान है और पिता, पितामह और प्रपितामह के लिए पिण्डदान का विधान किया गया है तदनन्तर ऋतुओं को पितर मानकर प्रणाम किया गया है। शतपथ ब्राह्मण में कहा गया कि पितृयज्ञ करने से पितरों का श्रेय लोक प्राप्त होत है और कुछ हानि या मृत्यु अपने अनुचित आचार से होता है, उसका प्रतिकार हो जाता है।[8] तैत्तिरीय ब्राह्मण[9] में पितृयज्ञ का

3. तैत्तिरीय संहिता 2-6-12.1
4. माध्यन्दिन शुक्ल यजुर्वेद : 19.70
5. शुक्ल माध्यन्दिन यजुर्वेद : 18.67; ऋग्वेद 10.15.13
6. कात्यायन श्रौत्रसूत्र : 4.7.30-31
7. द्रष्टव्य शतपथ ब्राह्मण : 2.4.2
8. द्रष्टव्य- शतपथ ब्राह्मण : 2.6.1.3
9. तैत्तिरीय ब्राह्मण 1.3.10

वर्णन है। तैत्तिरीय संहिता[10] में महापितृयज्ञ का वर्णन है। छान्दोग्य ब्राह्मण (2.3.1.2) में भी यह वर्णन मिलता है।

कात्यायन श्रौतसूत्र[11] में उल्लेख है कि प्रत्येक मास के कृष्ण पक्ष में अमावस्या तिथि को पिण्डपितृयज्ञ करना चाहिए।

गोभिल गृह्यसूत्र के सूत्र 4.4.1 की व्याख्या में व्याख्याकार पं. सत्यव्रत सामाश्रमी ने लिखा है— **'पिण्डपितृयज्ञ' पिण्डं शरीरं भस्मीभूतं तदुपलक्ष्य यत् पितृपुरुषस्यार्चनम् तदेव कर्म पिण्डपितृयज्ञ इत्युच्यते।'** पिण्ड का अर्थ है भस्मीभूत शरीर। भस्मीभूत शरीर वाले पितर के उद्देश्य से जो अर्चन दिया जाता है वह पिण्डपितृयज्ञ कहलाता है। इसी में सूत्र 4.4.2 की व्याख्या में लिखा गया है— **तत् पिण्डपितृयज्ञं कर्म श्राद्धम्—इत्याचक्षते।**

यह पिण्डपितृयज्ञ कर्मश्राद्ध कहलाता है। इस व्याख्या से स्पष्ट होता है कि पिण्डपितृयज्ञ ही श्राद्ध है। इसकी पुष्टि महाभारत के अनुशासन पर्व के अधोलिखित श्लोक से भी होती है—

शृणुस्वावहितो राजन् श्राद्धकर्मविधिं शुभम्।
धन्यं यशस्यं पुत्रीयं पितृयज्ञं परं तपः॥[12]

हे नरेश! तुम श्राद्ध कर्म के शुभ विधि को सावधान होकर सुनो। यह धन, यश और पुत्र प्राप्ति करानेवाले पितृयज्ञ है।

दूसरी बात पुष्टि की यह है कि आज भी श्राद्ध में प्रयुक्त होनेवाले मन्त्र एवं विधियाँ शतपथ ब्राह्मण के पिण्डपितृयज्ञ 2.4.1 में वर्णित मन्त्र एवं विधियाँ समान है। अतः यह सिद्ध हुआ कि शतपथ ब्राह्मण में वर्णित पिण्डपितृयज्ञ श्राद्ध ही है।

आपस्तम्ब धर्मसूत्र में कहा गया है कि श्राद्ध में पितर देवता होते हैं और निमंत्रित ब्राह्मण आहवनीय अग्नि।

तत्र पितरो देवता ब्राह्मणस्त्वाहवनीयार्थे।[13]

इसी गृह्यसूत्र में श्राद्ध हेतु निमंत्रित ब्राह्मण के लक्षण भी बतलाये गए हैं जो ध्यातव्य है—

प्रयतः प्रसन्नमनास्सृष्टो भोजयेद् ब्राह्मणान्ब्रह्मविदो योनिगोत्रमन्त्रान्तेवास्य सम्बन्धान्।[14]

पवित्र होकर, प्रसन्न मन से उत्साहपूर्वक वेदज्ञ ब्राह्मण को जो विवाह सम्बन्ध, रक्त सम्बन्ध, यजमान-पुरोहित सम्बन्ध या गुरु शिष्य सम्बन्ध से सम्बन्धित न हो, भोजन करावें।

शांख्यायन गृह्यसूत्र में वेदज्ञ (ब्रह्मविद्) ब्राह्मण का लक्षण बतलाया गया जो इस प्रकार है—

अधिदैवमथाध्यात्मिकमधियज्ञमिति त्रयम्।
मन्त्रेषु ब्राह्मणे चैव श्रुतमित्यभिधीयते।[15]

मन्त्रों तथा ब्राह्मणों में देव सम्बन्धी, आत्म सम्बन्धी तथा यज्ञ सम्बन्धी त्रिविध ज्ञान श्रुत (ब्रह्मविद्) कहा जाता है।

क्रियावन्तमधीयानं श्रुतवृद्धं तपस्विनम्।
भोजयेत्तं सकृद्यस्तु न तं भूयः क्षुदश्नुते।[16]

क्रियावान्, शास्त्राध्ययन में संलग्न, शास्त्रज्ञान में वृद्ध और तपस्वी-इनको जो एक बार भी भोजन कराता है, उसे फिर भूख पीड़ित नहीं करते।

ये निमन्त्रित ब्राह्मण के लक्षण मनुस्मृति में भी वर्णित है—

यज्ञेन भोजयेच्छ्राद्धे वह्वृचं वेदपारगम्।
शाखान्तमथाध्वर्युं छन्दोगं तु समाप्तिकम्।[17]

10. तैत्तिरीय संहिता 1.8.5.1
11. कात्यायन श्रौतसूत्र : 4.1.1
12. महाभारत : अनुशासन : 87.3
13. आश्वलायन धर्मसूत्र : 2.7.2.
14. आश्वलायन धर्मसूत्र : 2.7.4.
15. शांख्यायन गृह्यसूत्र : 1.2.5.
16. शांख्यायन गृह्यसूत्र : 1.2.6.
17. मनुस्मृति : 3.145

श्राद्ध में ऐसे ब्राह्मण को यत्नपूर्वक भोजन करावे जो बहुत ऋचाएँ जानते हों, वेद में पारंगत हो वा वेद की शाखाओं का ज्ञाता ऋत्विक् हो, वा जिसने वेद को समाप्ति तक पढ़ा हो।

एषामन्यतमो यस्य युञ्जीत श्राद्धमर्जितः।
पितॄणां तस्य तृप्तिः स्याच्छाश्वती साप्तपौरुषी।[18]

इनमें से जिसके यहाँ कोई एक पूजित ब्राह्मण श्राद्ध वस्तु को खाता है, उसके पितृजनों की तृप्ति सात पीढ़ी तक बराबर होती है।

वेद में हवन प्रधान था, ब्राह्मण भाग में पिण्डदान तथा धर्मसूत्र में ब्राह्मण भोजन। गृह्यसूत्रों में तीनों का समन्वय कर दिया गया। फलस्वरूप अग्नौकरण, पिण्डदान और ब्राह्मण भोजन ये श्राद्ध के तीन अंग हो गये।

आपस्तम्ब गृह्यसूत्र में पिता, पितामह एवं प्रपितामह के लिए अग्नि में अन्न तथा आज्य के हवन का उल्लेख है—

अन्नस्योत्तरा जुहोति।[19] **आज्याहुतिरुत्तरा।**[20]

पिता, पितामह और प्रपितामह के लिए पहले अन्न तदुपरान्त आज्य से हवन करें। कुछ ऋषि का मत है कि पहले आज्य तदुपरान्त अन्न से हवन करें। कुछ ऋषि का विचार था कि माता, मातामह और प्रमातामह के नाम से भी हवन होना चाहिए। इसी गृह्यसूत्र के सूत्र 8.21.8-9 में अन्न/आज्याहुति के पश्चात् ब्राह्मण भोजन, तदुपरान्त पिण्डदान का उल्लेख है। अन्य गृह्यसूत्रों में पिण्डदान के पश्चात् ब्राह्मण भोजन का विधान पाया जाता है। मनुस्मृति में भी अग्नौकरण (3-211), पिण्डदान (3-215, 216) तथा ब्राह्मण भोजन (3.231) का क्रमबद्ध विधान पाया जाता है। इससे स्पष्ट

"वेद में हवन प्रधान था, ब्राह्मण भाग में पिण्डदान तथा धर्मसूत्र में ब्राह्मण भोजन। गृह्यसूत्रों में तीनों का समन्वय कर दिया गया। फलस्वरूप अग्नौकरण, पिण्डदान और ब्राह्मण भोजन ये श्राद्ध के तीन अंग हो गये।"

होता है। श्राद्ध में अग्नौकरण, पिण्डदान एवं ब्राह्मण भोजन तीनों आवश्यक है। इस मत के हरदत्त, हेमाद्रि, कपर्दी आदि धर्मशास्त्र के व्याख्याकर सहमत है।[21]

आज भी श्राद्ध में पिण्डदान और ब्राह्मणभोजन प्रशस्त है, अग्नौकरण गौण हो गया है।

विहित लक्षणवान् ब्राह्मण के अभाव एवं धनाभाव में विकल्प की व्यवस्था हमारे शास्त्रकारों ने दी है—

(क) वशिष्ठ धर्मसूत्र के अनुसार अग्नि में हवन करना चाहिए वा ब्रह्मचारी को भोजन कराना चाहिए।

देवतायतने कृत्वा ततः श्राद्धं प्रवर्तयेत्।
प्रास्येदग्नौ तदन्नं वा दद्याद्वा ब्रह्मचारिणे॥[22]

देवमन्दिर में श्राद्ध कार्य करना चाहिए।अग्नि में हवन करना चाहिए वा ब्रह्मचारी को भोजन कराना चाहिए।

मनुस्मृति में उल्लेख है कि जो अग्नि है, वही द्विज है, अर्थात् लक्षणवान् द्विज के अभाव में अग्नि वा अग्नि के अभाव में लक्षणवान् द्विज का आश्रय लेना चाहिए।

18. तदेव : 3.146
19. आश्वलायन गृह्यसूत्र : 8.21.3
20. तदेव : 8.21.4
21. द्रष्टव्य- संस्काररत्नमाला- पृ. 1003; काणे : पी.बी. : धर्मशास्त्र का इतिहास : भाग 3 पृ. 1268 में उद्धृत.
22. वशिष्ठ धर्मसूत्र : 11.31

योऽह्यग्निः स द्विजो विप्रैर्मन्त्रदर्शिभिरुच्यते।[23]

अतः लक्षणवान् द्विज के अभाव में अग्नि में पितर के निमित्त हवन करना चाहिए।

(ख) बृहन्नारदीय पुराण में कहा गया है—

द्रव्याभावे द्विजाभावे ह्यन्नमात्रं च पाचयेत्।
पैतृकेन तु सूक्तेन होमं कुर्याद्विचक्षणः।[24]

द्रव्य के अभाव में अथवा ब्राह्मण के न मिलने पर स्वयं केवल अन्न पकावे और वह विचक्षण व्यक्ति पैतृक सूक्त (ऋग्वेद : 10.15) से हवन करें।

(ग) अत्यन्तहव्यशून्यश्चेत् स्वशक्त्या तु तृणं गवाम्।
स्नात्वा च विधिवद् विप्र कुर्याद्वा तिलतर्पणम्।[25]

यदि किसी प्रकार हवन करने में असमर्थ हो, तो अपनी शक्ति के अनुसार गायों को घास खिला दे अथवा विप्र स्नान करके विधिपूर्वक तिल के तर्पण कर दे।

(घ) अथवा रोदनं कुर्यादत्युच्चैर्विजने वने।
दरिद्रोऽहं महापापी वदन्निति विचक्षणः।[26]

अथवा किसी निर्जन वन में जाकर वह बुद्धिमान व्यक्ति 'मैं महापापी हूँ, दरिद्र हूँ' यह कहता हुआ उच्च स्वर से रोये।

वर्त्तमान परिस्थिति में यथाविहित लक्षण वाला ब्राह्मण मिलना दुर्लभ है, अतः अग्नि में पितृसूक्त से हवन तथा गोग्रास ही सुलभ प्रतीत होता है।

आश्वालायन गृह्यसूत्र[27] में चार प्रकार के श्राद्ध का उल्लेख है— पार्वणश्राद्ध, एकोद्दिष्ट श्राद्ध, आभ्युदयिक श्राद्ध और काम्यश्राद्ध। इन श्राद्धों के बारे में संक्षेप में वर्णन किया जाता है।

पार्वण श्राद्ध

'पार्वण श्राद्ध' दो शब्दों 'पार्वण' तथा श्राद्ध के योग से बना है। पार्वण का अर्थ है—**पर्वणि भवं पार्वणम्** अर्थात् पर्व में होनेवाला आश्वलायन गृह्य परिशिष्ट के अनुसार पर्व का अर्थ है—अमावस्या[28] चूँकि यह श्राद्ध अमावस्या को किया जाता है अतः यह पार्वण श्राद्ध कहलाता है। इसके विधि का वर्णन आश्वलायन गृह सूत्र 4.7.2 एवं 4.7. 5-7 में किया गया है। याज्ञवल्क्य स्मृति के विज्ञानेश्वर भाष्य में पिता, पितामह और प्रपितामह के उद्देश्य से किए जानेवाले श्राद्ध को पार्वण श्राद्ध माना है।[29]

अर्थात् पार्वण श्राद्ध पिण्डपितृयज्ञ है। पिण्डपितृयज्ञ भी अमावस्या को दिया जाता है।[30] और इसमें भी पिता, पितामह और प्रपितामह को पिण्डदान दिया जाता है।

एकोदिष्ट श्राद्ध

जो श्राद्ध एक व्यक्ति को उद्दिष्ट करके किया जाता है वह एकोद्दिष्ट श्राद्ध कहलाता है। यह श्राद्ध प्रेत के निमित्त मृत्यु उपरान्त ग्यारहवें दिन किया जाता है।[31] यद्यपि आश्वालयन गृह्यसूत्र में इस श्राद्ध के सन्दर्भ में किसी प्रकार का विधान नहीं है तथापि इसके वृत्तिकार ने उपर्युक्त मतों का समर्थन किया है। एकोदिष्ट श्राद्ध में अग्नौकरण एवं आवाहन नहीं होता।[32]

आभ्युदयिक श्राद्ध

अभ्युदये भवमाभ्युदयिकम् अर्थात् वह श्राद्ध जो अभ्युदय के समय किया जाता है, आभ्युदयिक श्राद्ध

23. मनुस्मृति : 3.212
24. बृहन्नारदीय पुराण : 28.79
25. तदेव : 28.80
26. बृहन्नारदीय पुराण : 28.80
27. द्रष्टव्य : आश्वलायन गृह्यसूत्र : 4.7.1
28. आश्वलायन गृह्यसूत्र परि- 2-14-13
29. द्रष्टव्य : याज्ञवल्क्य स्मृति : पृ. 88 : विज्ञानेश्वर भाष्य 1.217 की भूमिका
30. द्रष्टव्य : कात्यायन श्रौत्रसूत्र : 4.1.1
31. आश्वलायन गृह्यसूत्र 4.7.1 पर नारायण वृत्ति
32. द्रष्टव्य- याज्ञवल्क्य स्मृति : 1.251

"ऋषि अपने पिता के मरणोपरान्त प्रार्थना करता है— हे पितर! जिस स्थान को हमारे प्राचीन पितर पितामह आदि गए हैं, उसी मार्ग से आप भी जायें और उस स्थान पर पहुँचकर अमृतान्न से प्रसन्न होते हुए दोनों राजा यम तथा द्युतिमान् वरुण का दर्शन करे।"

कहलाता है। यह श्राद्ध विवाह तथा पुत्रजन्मादि के अवसर पर किया जाता है। इसका नाम नान्दी एवं वृद्धिश्राद्ध भी है। वृद्धिश्राद्ध नाम इसलिए पड़ा कि इसको करने से वंश में वृद्धि होती है। आश्वलायन गृह्यसूत्र में मंगल कार्यों एवं सरोवर आदि की प्रतिष्ठा के समय इस श्राद्ध करने का विधान है।[33]

काम्य श्राद्ध

जो श्राद्ध किसी विशिष्ट फल के प्राप्ति के लिए किया जाता है, काम्य श्राद्ध कहलाता है। यथा स्वर्ग, संतति आदि प्राप्ति के लिए कृतिका या रोहिणी नक्षत्र में किया गया श्राद्ध।[34]

श्राद्ध का उल्लेख आश्वलायन गृह्यसूत्र (4.7.1), गोभिल गृह्य सूत्र (4.4.1), शांख्यायन गृह्यसूत्र (4.1.1) तथा कौशितिकी गृह्य सूत्र (3.14.1), गौतम धर्मसूत्र (2.6.1) आपस्तम्ब धर्मसूत्र (2.7.1), बौधायन धर्मसूत्र (2.8.1) एवं कठोपनिषद् (1.2.17) में दिया गया है।

मनुस्मृति, याज्ञवल्क्य स्मृति आदि प्रमुख स्मृति ग्रन्थों में इसका वर्णन है इसके साथ उसका वर्णन प्रायः सभी पुराणों में किया गया है।

वाल्मीकि रामायण के अयोध्याकाण्ड में भी उल्लेख है कि श्रीराम ने अपने पिता दशरथ के लिए पिण्ड दान किया था—

ऐङ्गुदं बदरैर्मिश्रं पिण्याकं दर्भसंस्तरे।
न्यस्य रामः सुदुःखार्त्तो रुदन् वचनमब्रवीत्।[35]

श्रीराम ने इंगुदी के गूदे में बेर मिलाकर उसका पिण्ड तैयार किया और बिछे हुए कुशों पर उसे रखकर अत्यन्त दुःख से आर्त हो रोते हुए यह बात कही—

इदं भुंक्ष्व महाराज प्रीतो यदशना वयम्।
यदन्नः पुरुषो भवति तदन्नास्तस्य देवता॥[36]

महाराज, प्रसन्नतापूर्वक यह भोजन स्वीकार कीजिए, क्योंकि आजकल यही हमलोगों का आहार है। मनुष्य स्वयं जो अन्न खाता है, वही उसका देवता ग्रहण करते हैं। इसी रामायण में श्राद्ध में ब्राह्मण-भोजन का भी वर्णन है।[37]

महाभारत शान्तिपर्व में उल्लेख है कि महाभारत युद्ध के बाद महाराज युधिष्ठिर ने जाति, भाई और कुटुम्बी जनों में से जो लोग युद्ध में मारे गए थे, उन सबके लिए अलग अलग श्राद्ध करवाये।

ततो युधिष्ठिरो राजा ज्ञातीनां ये हता युधि।
श्राद्धानि कारयामास तेषां पृथगुदारधीः॥[38]

श्रीकृष्ण के महाप्रस्थान के पश्चात् युधिष्ठिर ने वसुदेव, श्रीकृष्ण, बलराम आदि का श्राद्ध किया था।[39]

33. द्रष्टव्य- आश्वलायन गृह्यसूत्र : 2.5.13; आश्वलायन गृह्यसूत्र-अनुवादक श्री यमुना पाठक की भूमिका
34. द्रष्टव्य- काणे : धर्मशास्त्र का इतिहास : भाग 3 : पृ. 1215
35. रामायण : अयोध्याकाण्ड : 103.29
36. वाल्मीकि-रामायण : अयोध्याकाण्ड : 103.30
37. वाल्मीकि-रामायण : अरण्यकाण्ड : 11.56 : 61
38. महाभारत : शान्तिपर्व : 42.1
39. महाभारत : महाप्रस्थानिक पर्व, 1.10-11.

पितरों का वासस्थान

अब संक्षेप में पितर लोगों के वासस्थान पितर लोक का वर्णन करना प्रासंगिक प्रतीत होता है। वेद में पितर लोक का वर्णन है। ऋषि अपने पिता के मरणोपरान्त प्रार्थना करता है— हे पितर! जिस स्थान को हमारे प्राचीन पितर पितामह आदि गए हैं, उसी मार्ग से आप भी जायें और उस स्थान पर पहुँचकर अमृतान्न से प्रसन्न होते हुए दोनों राजा यम तथा द्युतिमान् वरुण का दर्शन करे।

प्रेहि प्रेहि पथिभिः पूर्व्येभि-
र्यत्र नः पूर्वे पितरः परेयुः।
उभा राजाना स्वधया मदन्ता
यमं पश्यसि वरुणं च देवम्।[40]

पुनः प्रार्थना करता है— हे मेरे पिता! तदनन्तर तुम उत्कृष्ट स्वर्ग नामंक स्थान में अपने पितरों के साथ मिलो और इष्टापूर्त कर्म के फल को प्राप्त करो। तत्पश्चात् अवद्य पाप को परित्याग कर आओ एवं शोभनयुक्त शरीर से गमन करो।

संगच्छस्व पितृभिः सं यमेनेष्टा-
पूर्तेन परमे व्योमन्।
हित्वा यावद्यं पुनरस्तमेहि
संगच्छस्व तन्वा सुवर्चा॥[41]

ऋग्वेद में दसम मण्डल के 15वें सूक्त में पितरों के अवरलोक, मध्यम लोक एवं उत्तम लोक का वर्णन मिलता है और प्रार्थना किया गया है कि अवरलोक के पितर मध्यम लोक में जाये, मध्यम लोक के पितर उत्तम लोक में तथा उत्तम लोक के पितर मोक्ष को प्राप्त करें।

उदीरतामवर उत्परास उन्मध्यमाः पितरः सोम्यासः।
असुं य ईयुरवृका ऋतज्ञास्ते नोऽवन्तु पितरो हवेषु।[42]

हमारे जो पितर अवर लोक में स्थित हैं— वे मध्यम लोक में जायें, मध्यम लोक में रहनेवाले पितर उत्तम लोक में जायें तथा उत्तम लोक के वासी पितर मोक्ष को प्राप्त करें। कुटिलता से रहित होकर और यज्ञ या सत्य को जाननेवाले पितर वायव्य शरीरधारी बन गए हैं, वे पितृजन हमें आवाहन में रक्षा करें।[43]

उपर्युक्त ऋचाओं से स्पष्ट होता है कि वैदिक काल में पितर लोक में जाने की अभिलाषा लोगों में थी।

तैत्तिरीय उपनिषद् 2.8.2 में पितृलोक का वर्णन है, जिसमें उल्लेख है कि पितृलोक का आनन्द एक मनुष्य आनन्द का लाख गुणा अधिक है तथा बृहदारण्यक उपनिषद् 4.3.33 में उल्लेख है कि एक मानुष आनन्द का सौ गुणा आनन्द पितर लोक में मिलता है।

अथ ये शतं मनुष्याणामानन्दाः, स एकः पितॄणां जितलोकानामानन्दो॥[44]

बृहदारण्यक उपनिषद् में तीन लोकों का वर्णन मिलता है— (क) मनुष्य लोक, (ख) पितर लोक एवं (ग) देवलोक।[45]

गीता में भी पितर लोक का उल्लेख है—

यान्ति देवव्रता देवान् पितॄन् यान्ति पितृव्रताः।
भूतानि यान्ति भूतेज्या यान्ति मद्याजिनोऽपि माम्।[46]

देवताओं का पूजन करनेवाले देवता लोक को, पितरों के पूजनेवाले पितर लोक को, भूतो की पूजा करनेवाले भूतों को प्राप्त होती है और मेरा (भगवान्) पूजन करनेवाले भक्त भगवान् को प्राप्त होते हैं।

कठोपनिषद् में भी **"यथा स्वप्ने तथा पितृलोके"**[47] में पितर लोक का वर्णन मिलता है।

40. ऋग्वेद 10.14.7
41. ऋग्वेद : 10.14.8
42. ऋग्वेद 10.15.1; माध्यन्दिन शुक्ल यजुवेद : 18.48
43. द्रष्टव्य : माध्यन्दिन शुक्ल यजुर्वेद : 18.48 : महीधर भाष्य
44. बृहदारण्यक उपनिषद् 4
45. द्रष्टव्य : बृहदारण्यक उप : 1.5.16.
46. गीता : 8.25
47. कठोपनिषद् : 3.2.5.

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि पितर लोक है, जिसमें साधु आचरण वाले पितर का वास होता है।

इस पिण्डपितृयज्ञ/श्राद्ध द्वारा अग्नि/परमात्मा से प्रार्थना किया जाता है कि जो पितर अभी तक पितर लोक नहीं पहुँच पाये वे अपने अभीष्ट लोक/शरीर को प्राप्त करें।

ये अग्निदग्धा ये अनग्निदग्धा
मध्ये दिवः स्वधया मादयन्ते।
तेभिः स्वराळसुनीतिमेतां
यथावशं तन्वं कल्पयस्व॥[48]

श्राद्ध एक पवित्र अनुष्ठान है। इसे श्रद्धापूर्वक यथा विहित विधि से पितर के लिए करना चाहिए। हमारे सनातन धर्म का उद्देश्य है कि प्रत्येक धार्मिक अनुष्ठान में तीन व्रतों का पालन अवश्य हो उपवास, संयम तथा दान। मृत्यु उपरान्त सामान्यतया दस दिनों की अशौच अवधि रखी जाती है, जिसमें कर्त्ता एवं कर्त्ता के पारिवारिक सदस्यों से अपेक्षा की गई है वे ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करें। इस अवधि में गरुड-पुराण, कठोपनिषद् आदि का श्रवण करें। साथ ही, श्राद्ध के अवसर पर यथाशक्ति योग्य पात्र (सत्पात्र) को दान दें। यज्ञ में दान, तपस्या और व्रत आवश्यक है, यह चित्त को शुद्धि करनेवाला है।

मृत्यु जीवन का एक यर्थाथ सत्य है। हमें अपने पूर्वजों के कृत्य को स्मरण करना चाहिए। साथ हमें भी अपने चरित्र को पावन बनाना चाहिए; क्योंकि मृत्यु से कोई वंचित नहीं रह सकता। कर्म का फल अवश्य भोगना पड़ता है। अतः जीवन सदाचार पूर्ण तपःप्रधान होना चाहिए। श्राद्ध हमें यह स्मरण कराता है।

***

48. ऋग्वेद : 10.15.14

श्राद्ध किसे कहते हैं?

(क) संस्कृतं व्यञ्जनाढ्यञ्च पयोमधुघृतान्वितम्।
श्रद्धया दीयते यस्मात् श्राद्धं तेन निगद्यते॥

भली भाँति पकाया हुआ अन्न जिसके साथ व्यञ्जन हो, वह दूध, मधु तथा घी से युक्त हो वह श्रद्धा के साथ जहाँ अर्पित किया जाये उसे श्राद्ध कहते हैं।

बृहस्पति स्मृति, श्राद्धकाण्ड, 36. रंगास्वामी आयंगर (सम्पादक), बड़ोदा, 1941ई., पृ. 331.-